पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से ग्रामीण विकास

गुलाब चन्द यादव

शोध छात्र
समाजशास्त्र विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

जब मनुष्य जंगलों में आदिमानव के रूप में रहता था तथा शिकार करके अपना पेट पालता था, उस समय भी मनुष्य के बीच सामुदायिकता का भाव था और वह झुण्ड बनाकर रहता था। धीरे–धीरे मानव ने सभ्य होना शुरू किया तो उसने खानाबदोशी जीवन त्यागकर एक ही जगह बसना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार गाँव अस्तित्व में आये। जब वह कुछ और सभ्य हुआ तो उसे अपने गाँवों में एक ऐसी व्यवस्था की जरूरत महसूस हुयी जो ग्रामीण कार्यो का प्रबन्धन कर सके। इस प्रकार पंचायती राज व्यवस्था का अभ्युदय हुआ। इस व्यवस्था का प्रारम्भिक स्वरूप 'नातेदारी व्यवस्था' या गाँव की परिषद अथवा 'वृद्धो की एक परिषद' के रूप में रहा होगा क्योंकि कुछ जनजातियों में आज भी कुछ इसी तरह की संस्थाऐं पायी जाती है।

लोकतंत्र मानव गरिमा, व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं समानता राजनीतिक निर्णयों में जनभागीदारी के कारण शासन का श्रेष्ठतम रूप माना जाता है। लोकतंन्त्र का आधार, शासन में जनसहभागिता के साथ ही शासन का निम्न स्तर तक विकेन्द्रीकरण है, उसी भावना का साकार रूप पंचायती राज व्यवस्था है।

भारत में पंचायती राज का इतिहास बहुत पुराना है। इसकी जड़े हड़प्पा सभ्यता से लेकर वर्तमान समय तक देखी जा सकती है। जब दुनियाँ सभ्य हो रही थी उसी समय वैदिक काल में हीं हमारे यहाँ पंचायतें अस्तित्व में आ चुकी थी। शायद यही कारण है कि प्राचीन भारत को ग्राम पंचायत के देश के रूप में भी प्रसिद्धि प्राप्त थी। वैदिक काल में 'सभा', 'समिति' तथा विदथ जैसी संस्थाएँ भी अस्तित्व में थी जो आज की पंचायत समितियाँ जैसा ही कार्य करती थी। इस सन्दर्भ में चार्ल्स मेटकाफ द्वारा ग्रामीण समुदाय के सन्दर्भ में दिये गये निम्न विचार महत्वपूर्ण है।

''जहाँ कुछ भी नहीं टिकता, वहाँ वे टिके रहते है। राजवंश एक के बाद एक धराकुंठित होते रहते है, एक क्रान्ति के बाद दूसरी क्रान्ति आती है। हिन्दू, पठान, मुगल, मराठा, सिक्ख व अंग्रेज सभी बारी–बारी से अपना स्वामित्व स्थापित करते है किन्तु ग्राम समाज ज्यों के त्यों बने रहते है। संकट काल में वे अपने शस्त्र सज्जित करते है तथा अपनी किलेबन्दी करते है। उन ग्रामीण समाजों की, जिनमें से प्रत्येक अपने में एक छोटा सा राज्य था यह एकता ही वह चीज थी जिसने भारत की जनता को उन सभी क्रान्ति और परिवर्तनों के बीच सुरक्षित रखा, जिनका समय–समय पर उसे शिकार होना

Scanned with CamScanner

पड़ा था। उसकी यह एकता बहुत अंशो में उनके सुख तथा उनकी स्वतंन्त्रता व आत्मनिर्भरता का कारण रही है।''

रामायण एवं महाभारत काल में भी 'ग्रामिणी' नामक एक राजकीय अधिकारी का उल्लेख मिलता है जो गाँव की समस्त समस्याओं के समाधान का प्रयास करता था। मनुस्मृति में ग्रामिक, दशिक, विशाधिप तथा सहस्रपति नामक अधिकारी का उल्लेख मिलता है। वैदिक सभ्यता वास्तव में ग्रामीण सभ्यता थी, कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी ग्रामीण प्रशासन के बारे में काफी कुछ लिखा गया है। चीनी विद्वान मैगस्थनीज ने भी अपने यात्रा विवरणों में लिखा है कि प्राचीन भारत में ग्राम छोटे–छोटे आत्मनिर्भर और गणतन्त्र थे। मौर्यकाल तथा गुप्त काल में भी भारतीय गाँवों में पंचायतों को बहुत अधिकार प्राप्त थे। राजपूतकाल में भी प्रशासन की संरचना कुछ–कुछ ऐसी ही थी। मजे की बात यह है कि राजपूत काल में नगरों की अपेक्षा गाँव कहीं अधिक स्वतंन्त्र होते थे क्योंकि नगरों का प्रशासन केन्द्रीकृत नौकरशाही द्वारा चलाया जाता था।

मध्यकाल में देश में मुस्लिम शासकों का शासन रहा, जिसमें प्रशासन का मुख्य कार्य सैनिक करते थे। इस कारण गाँवों में पंचायती राज व्यवस्था का महत्व बहुत कम हो गया। इसी प्रकार मुगल काल में भी गाँवों के राजनीतिक अधिकार बहुत कम कर दिये गये। मुस्लिम शासन से पहले भारत में पंचायत व्यवस्था बहुत उन्नत अवस्था में थी लेकिन धीरे–धीरे इस व्यवस्था का स्थान जागीरदारी व्यवस्था ने ले लिया।

ब्रिटिश काल में पंचायती राज व्यवस्था मुस्लिम शासन काल की अपेक्षा कुछ सुधरी लेकिन जागीरदारी व्यवस्था का जमींदारी व्यवस्था में तब्दील होने के कारण वह लगभग प्रभुत्व वर्ग के अधीन ही रही। अंग्रेजों ने मात्र नगरीय स्थानीय प्रशासन पर ही ध्यान दिया तथा ग्रामीण प्रशासन पर कोई ध्यान नहीं दिया। नगरों में स्थानीय प्रशासन की शुरूआत सन् 1687 में उस समय से माना जा सकता है जब भारत में पहली बार मद्रास नगर निगम की स्थापना की गयी। उसके बाद सन् 1726 में बम्बई और कोलकाता में नगर निगमों की स्थापना की गयी। इसके बाद प्रमुख नगरों में 'जस्टिस आफ पीस' की नियुक्ति की गयी जिसका प्रावधान सन् 1773 के रेग्युलेटिंग एक्ट में किया गया था। एक बार स्थानीय निकाय अस्तित्व में आये तो फिर वे लगातार विकसित होते गये। पहले इन निकायों में मनोनयन होता था लेकिन फिर इनमें निर्वाचन पद्धति स्थापित होती चली गयी। लार्ड मेयों को स्थानीय प्रशासन का पितामह माना जाता है क्योंकि सबसे पहले उसी ने स्थानीय स्तर पर स्वायत्त शासन लागू करने पर जोर दिया। भारत में स्थानीय शासन का स्पष्ट विकास लार्ड रिपन के कार्यकाल में देखने को मिलता है। सन् 1882 में लार्ड रिपन ने प्रस्ताव पारित किया जो स्थानीय शासन का एक नया दर्शन प्रस्तुत करता था। और इसीलिए इस प्रस्ताव को भारत में स्थानीय शासन का मैग्नाकार्टा कहा जाता है। स्थानीय प्रशासन के क्षेत्र में एक और मील का पत्थर साबित हुआ माण्टेग्यू–चेम्सफोर्ड सुधार। इन सुधारों में भारत में एक जबावदेह सरकार की स्थापना को ब्रिटिस सरकार का मुख्य लक्ष्य घोषित किया गया।

Scanned with CamScanner

भारत गाँवों का देश है। गाँवों की उन्नति और प्रगति पर ही भारत की उन्नति व प्रगति निर्भर करती है। 2011 की जनगणना के अनुसार आज भी देश की लगभग 68 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है। गाँधी जी ने ठीक ही कहा था कि ''यदि गाँव नष्ट हो गये तो देश नष्ट हो जायेगा'' भारत के संविधान निर्माता भी इस तथ्य से भली–भाँति परिचित थे। अतः हमारी स्वाधीनता को स्थायी बनाने के लिए ग्रामीण शासन व्यवस्था की ओर पर्याप्त ध्यान दिया गया। हमारे संविधान में यह निर्देश दिया गया है कि ''राज्य ग्राम पंचायतों के निर्माण के लिए कदम उठायेगा और उन्हें इतनी शक्ति और अधिकार प्रदान करेगा जिससे वे स्वशासन की इकाई के रूप में कार्य कर सके।''

आजादी के बाद से लेकर 73वें संविधान संशोधन तक भारतीय संविधान के सिर्फ नीति निदेशक तत्वों मे ही विकेन्द्रीकरण से सम्बन्धित प्रावधान किये गये थे। अनुच्छेद 40 में राज्यों को ग्राम पंचायत की स्थापना से सम्बन्धित कदम उठाने का निर्देश दिया गया है।

स्वतन्त्रता के बाद 2 अक्टूबर 1952 को प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम' को आरम्भ करने की घोषणा की। सामुदायिक विकास कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण विकास और ग्रामीण प्रशासनिक विकास को सुनिश्चित करना था। 1953 में एक नया अनुसंधान राष्ट्रीय सेवा के रूप में किया गया। NES प्रखंण्डों का गठन हुआ। प्रत्येक प्रखण्ड लगभग 300 गाँवों से मिलाकर बनाया गया तथा प्रखण्ड विकास पदाधिकारी के पर्यवेक्षण में इसे कार्यरत किया गया। इसके अलावाँ प्रत्येक प्रखण्ड में विस्तार अधिकारी नियुक्त किये गये जो कृषकों और छोटे मिल मालिकों को तकनीकी मार्गदर्शन देने का कार्य करते थे।

यद्यपि उपर्युक्त दोनों कार्यक्रम बहुत ही उम्मीद के साथ आरम्भ किये गये थे परन्तु दुर्भाग्यवश ये असफल रहे। नौकरशाही के जाल में फंसने के कारण इसे जनसमर्थन तथा जनसहभागिता नहीं प्राप्त हो सकी। सामुदायिक विकास कार्यक्रमों तथा राष्ट्रीय अनुसंधान सेवा की असफलता का पता लगाने तथा इस पर प्रभावी सुझाव देने के लिए 16 जनवरी सन् 1957 को भारत सरकार ने बलवन्त राय मेहता की अध्यक्षता में एक कमेटी बनायी जिसने 24 नवम्बर 1957 को अपना प्रतिवेदन राष्ट्रीय विकास परिषद को सौप दिया। इस प्रतिवेदन में इस कमेटी ने मुख्य रूप से निम्न सुझाव दिये।

1. गाँव से लेकर जिला स्तर तक स्थानीय स्वशासन की परस्पर सम्बन्धित त्रिस्तरीय रचना होना चाहिए। इसके सबसे निम्न स्तर पर ग्राम सभा या ग्राम पंचायत तथा सबसे उच्च स्तर पर जिला परिषद। इन दोनों के बीच में पंचायत समितियाँ अथवा जनपद पंचायते हों
2. इन संस्थाओं को प्रशासन की वास्तविक शक्तियाँ एवं उत्तरदायित्व सौपें जाने चाहिए।
3. इनको पर्याप्त साधन स्रोत उपलब्ध कराये जायें ताकि ये संस्थाएँ अपना उत्तरदायित्व पूरा कर सके।
4. योजना द्वारा बनाये गये समस्त सामाजिक एवं आर्थिक विकास कार्यक्रम इन्हीं अभिकरणों द्वारा चलाये जाना चाहिए।

Scanned with CamScanner

5. एक ऐसी व्यवस्थाा विकसित की जाये ताकि शक्तियों एवं उत्तरदायित्वों का और विकेन्द्रीकरण किया जा सके।

बलवन्त राय मेहता की संस्तुतियों को केन्द्र और राज्य सरकारों का समर्थन प्राप्त हुआ तथा इन्हीं संस्तुतियों के आधार पर 2 अक्टूबर 1959 को पंचायत राजव्यवस्था का आरम्भ राजस्थान के नागौर जिले से किया गया। आन्ध्र प्रदेश में भी इसे लागू किया गया। साथ ही देश के अन्य राज्यों में भी इससे सम्बन्धित कानून बनाये गये। लेकिन 1960 के मध्य दशक तक इसका आकर्षण पुनः समाप्त होने लगा।

1977 में तत्कालीन केन्द्रीय सरकार ने पंचायती राज व्यवस्था को पुनः मजबूती देने के लिए एक नई समिति अशोक मेहता समिति का गठन किया। समिति ने 1978 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया।

अशोक मेहता समिति ने वर्तमान त्रिस्तरीय व्यवस्था के स्थान पर द्विस्तरीय व्यवस्था का सुझाव दिय। इसमें जिला स्तर पर जिला परिषद और निम्न स्तर पर मण्डल पंचायत रखने की सिफारिश की गई। मण्डल पंचायत कई गाँवों से मिलाकर बनाने की बात कही गई। अशोक मेहता समिति ने पंचायती राज संस्थाओं को करारोपण की शक्ति अनिवार्य रूप से प्रदान करने की सिफारिश की जिससे राज्य सरकार के अनुदान पर इनकी निर्भरता कम हो सके।

अशोक मेहता समिति की संस्तुतियों पर कोई कार्यवाही नहीं हो सकी क्योंकि तत्कालीन जनता पार्टी सरकार सन् 1980 में ही गिर गयी। यद्यपि बाद में कर्नाटक ने मण्डल पंचायत को अपने यहाँ लागू कर इसकी कुछ संस्तुतियों पर कार्यवाही की।

1984 में हनुमंता राव समिति ने जहाँ एक अलग जिला योजना संस्था के गठन की सिफारिस की थी वहीं 1985 में जी0वी0 के0 राव समिति ने जिला स्तर पर योजना बनाने एवं नियमित चुनाव कराने की सिफारिश की थी। 1986 में एल0 एम0 सिधवीं समिति (भारत सरकार के ग्रामीण विकास की) गठित की गयी जिसने पंचायती राज को सांविधानिक दर्जा प्रदान करने की सिफारिस की थी। इस समिति ने न्याय पंचायत जैसी संस्था के गठन की सिफारिस की थी जैसा कि राजस्थान में पहले से कार्यरत थी। उपर्युक्त सभी समितियों की विभिन्न सिफारिशों और संस्तुतियों को ध्यान में रखते हुए 1989 में 64वें संविधान संशोधन को संसद में प्रस्तुत किया गया। लेकिन राज्य सभा में पारित न हो पाने के कारण यह विधेयक संसद में पारित नहीं हो सका।

सन् 1991 में नाथूराम मिर्धा समिति ने भी पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक अधिकार प्रदान करने की सिफारिश की थी। 1989 में संसद में समर्थन न मिलने वाले विधेयक में थोड़ा बहुत परिवर्तन करके 1992 में 73वें संविधान संशोधन के रूप में संसद में पुनः प्रस्तुत किया गया तथा इस बार नए प्रावधानों को नये विधेयक के तहत संसद की स्वीकृति प्राप्त हो गयी। 24 अप्रैल 1993 से लागू 73 वॉ संविधान संशोधन इन प्रावधानों के साथ पंचायती राज को सांविधानिक मान्यता देता है।

Scanned with CamScanner

इस संशोधन के द्वारा संविधान में एक नया भाग (भाग–9) अन्तः स्थापित किया गया जिसमें अनुच्छेद 243क से 243 च समाहित हैं। संविधान में 11वीं अनुसूची को जोड़ा गया है जिसमें पंचायती राज से सम्बन्धित 29 विषयों का समावेश है। 73वें संविधान संशोधन के बाद जो सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है वह यह कि प्रत्येक 5 वर्ष में पंचायत का चुनाव अनिवार्य रूप से कराना होगा तथा यदि किसी कारण वश यह पहले विघटित हो जाती है तो 6 महीने के भीतर इसका चुनाव कराना अनिवार्य होगा तथा यह पंचायत केवल शेष अवधि के लिए ही कार्य करेगी।

पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से ग्रामीण विकास की ऐसी रेखा खींची जा सकती है जो विकास की विभिन्न विमाओं जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वच्छता, रोजगार, दलित व समाज के कमजोर वर्गो के सम्पूर्ण विकास, महिला सशक्तीकरण, ग्रामीण विद्युतीकरण, कृषि से सम्बन्धित विभिन्न जानकारी आदि को पूरा करने में सक्षम है। अतः ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज को एक ही सिक्के के दो पहलू कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी।

पंचायती राज व्यवस्था भारतीय ग्रामीण समाज की रीढ़ है। वर्तमान में पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक न्याय एवं आर्थिक विकास की प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। पंचायती व्यवस्था का मूलभूत लक्ष्य यही है कि गांवों से पुरानी व्यवस्था को परिवर्तित करके एक ऐसे समता मूलक समाज की रचना की जाए जिसमें शोषण, असमानता, अन्याय तथा महिलाओं के उत्पीड़न सम्बन्धी कोई रेखा विद्यमान ही न हों, समाज के सभी जाति, वर्ग, महिला व पुरूष एवं बालकों के अधिकारों को संरक्षित व सुरक्षित करना सम्भव हो सके। बेरोजगारी, गरीबी व भुखमरी जैसे दानवों से मुक्त गाँव स्वतंन्त्रता, समानता व न्याय के प्रतिबिम्ब हो। इस प्रकार से पंचायते सामाजिक न्याय एवं आर्थिक विकास की वास्तविक तस्वीर के प्रत्यक्ष साक्षी होंगे तथा इस दुष्कर व जटिल कार्य के सम्पादन में पंयायतों की भूमिका सर्वोपरि एवं महत्वपूर्ण साबित होगी।

भारत सरकार ने समय–समय पर पंचायतों के माध्यम से विभिन्न ग्रामीण विकास योजनाओं को संचालित किया है जिसमें मुख्य रूप से जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना, समग्र आवास योजना, इन्दिरा आवास योजना, प्रधानमंत्री ग्रामोदय सड़क योजना, अन्नपूर्णा एवं अन्त्योदय योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना (मनरेगा), राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन आदि शामिल है। उपरोक्त योजनाओं के माध्यम से सरकार गाँवों की तस्वीर पूरी तरह बदलना चाहती थी। कहना न होगा कि कुछ पंचायते उपरोक्त योजनाओं का पूरा लाभ उठाया और आज विकसित अवस्था में पहुंच चुकी है। इसी प्रकार गाँवों में विद्यमान बेरोजगारी, गरीबी, निरक्षरता जैसा भयावह समस्याओं के समाधान में पंचायते महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहीं है। देश में गरीबी उन्मूलन व रोजगार सृजन हेतु संचालित विभिन्न योजनाओं के सफल क्रियान्वयन का उत्तरदायित्व पंचायतों को सौपा गया हैं। पंचायतें जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, स्वर्ण जयन्ती ग्राम समृद्धि योजना, स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना, मिड डे मील योजना, प्रधानमंत्री ग्रामोदय तथा मनरेगा जैसी योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा

Scanned with CamScanner

रहीं है। ग्राम स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत स्वंय सहायता समूहों को बैकों से ऋण प्रदान करके सूक्ष्म उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहित किया गया। ग्रामीण गरीबी, भुखमरी एवं बेरोजगारी जैसी जटिल समस्याओं के समाधान के लिए केन्द्र सरकार द्वारा फरवरी 2006 में प्रवर्तित महत्वाकांक्षी महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना के कार्यान्वयन में पंचायतों का योगदान सराहनीय रहा है। इस योजना के संचालन से स्थानीय स्तर पर ग्रामीण बेरोजगारों के काम उपलब्ध होने से गाँवो से शहरों की तरफ पलायन की प्रवृत्ति पर अंकुश लगा है। इस योजना से महिलाओं अनुसूचित जाति व जनजाति तथा पिछड़े वर्गो के लोगों को भी रोजगार प्राप्त हुआ है।

पंचायते इसी प्रकार महिला स्वंयसिद्धा योजना के माध्यम से महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक स्थिति को सुधारने का प्रयास कर रही है। 2000–01 से संचालित सर्व शिक्षा अभियान को सफल बनाने में मध्यान्ह भोजन योजना (मिड डे मिल योजना) की भूमिका को नकारा नही जा सकता है। पंचायतों के सक्रिय प्रयासों के कारण ही गाँवों में साक्षरता का स्तर बढ़ा है। बालिकाओं का स्कूलों में नामांकन बढ़ने के साथ ठहराव में भी बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है।

निर्मल भारत अभियान तथा अब स्वच्छ भारत अभियान तथा सांसद आदर्श ग्राम योजना भी पंचायतों के बिना सफल नहीं हो सकती। गाँवों में पेयजल की समस्या का समाधान करने के लिए केन्द्र सरकार ने 'स्वजल धारा' कार्यक्रम के क्रियान्वयन का दायित्व पंचायतों को सौपा है। ग्राम पंचायतों के माध्यम से लागू किये गये इस कार्यक्रम के अन्तर्गत गाँवों में कुएँ, बावड़ी बनाने व हैण्डपम्प लगाने पर होने वाली कुल लागत का 10 प्रतिशत अंश ग्रामवासियों तथा शेष 90 प्रतिशत केन्द्र सरकार द्वारा वहन किये जाने का प्रावधान रखा गया है। अनुसूचित जाति/जनजाति, कमजोर वर्ग के लोगों को तथा मुक्त बन्धुआ श्रमिकों को आवास उपलब्ध कराने के लिए पंचायते प्रयासरत है। भारत निर्माण योजना का शुभारम्भ 2005 में किया गया। इस योजना के तहत गाँवों में छः प्रमुख क्षेत्रों जैसे– सिंचाई, जलापूर्ति, आवास, सड़क, टेलीफोन एवं विद्युतीकरण के विकास का लक्ष्य रखा गया है। इस योजना के प्रभावी क्रियान्वयन में पंचायतों की भूमिका पर बल दिया गया है।

पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से आज देश की ग्रामीण जनसंख्या विशेषकर समाज के कमजोर वर्गो दलित, पिछड़े वर्ग तथा महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी बढ़ी है। तथा उनमें अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी है। इसी प्रकार पंचायतों में महिलाओं के आरक्षण प्रदान किये जाने से पंचायत के विभिन्न स्तरों में उनके निर्वाचित प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ी है।

यद्यपि पंचायतों में महिलाओं की संख्या में बढ़ोत्तरी अभी संख्यात्मक ज्यादा तथा गुणात्मक कम है क्योंकि महिलाओं द्वारा प्राप्त किया गया पद मूल रूप से उनके पति, ससुर, देवर, बेटे, पिता, भाई आदि द्वारा ही संचालित हो रहा है लेकिन कहीं–कहीं इसके अपवाद भी है। कुछ महिलाओं ने पंचायतों में अपनी जोरदार उपस्थिति दर्ज की है जो ग्रामीण विकास के साथ–साथ समाज के विकास की भी आधारशिला होगी। इसी प्रकार दलित व पिछड़ी जातियाँ पंचायतों में

Scanned with CamScanner

आरक्षण के कारण निर्वाचित होकर पहुँच रही है जो यह मिथक तोड़ने में सफल हो रही है कि पंचायत प्रतिनिधि केवल उच्च वर्ग तथा दबंग लोग ही बन सकते है। पंचायती राज व्यवस्था के प्रभावी होने की वजह से गाँवों में राजनीतिक चेतना, राजनैतिक जागृति एवं राजनैतिक सहभागिता का सूत्रपात हुआ है। सदियों से शोषित दलित वर्ग, अनुसूचित जाति व जनजाति एवं पिछड़े वर्ग के लोगों की सत्ता में भागीदारी व नेतृत्व बढ़ने से उनमें नवीन शक्ति, सामर्थ्य व चेतना का संचार हुआ है।

उपर्युक्त उपलब्धियों के बावजूद भी पंचायती राज व्यवस्था के क्रियान्वयन में अनेक खामियाँ सामनें आयी है। जिनको दूर करके इस व्यवस्था को और अधिक सशक्त, प्रभावी एवं सफल बनाया जा सकता है। प्रमुख तौर पर भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद व लाल फीताशाही जैसे अवांछनीय तत्व ग्राम विकास सम्बन्धित सभी योजनाओं की सफलता पर प्रश्न चिन्ह लगा देते है। पंचायती चुनावों के दौरान हिंसात्मक घटनाओं, मतपेटियाँ छीनने जोर–जबर्दस्ती व गुण्डागर्दी का बोलबाला रहता है। जिससे इन चुनावों की निष्पक्षता पर सवालिया निशान लग जाते है। आज पंचायत चुनावों में जिस तरह धन बल व शराब का खेल चल रहा है। यह पंचायती राज व्यवस्था की मूल आत्मा को ही नष्ट कर देगी। जो प्रतिनिधि लोगों को पैसा देकर व शराब पिलाकर वोट ले लेता है वह प्रतिनिधि चुने जाने के बाद ग्रामीण विकास सम्बन्धित बहुत ही कम काम करते है।

अतः आज पुनः इस बात की आवश्यकता आन पड़ी है कि पंचायती राज व्यवस्था में कुछ महत्वपूर्ण संशोधन किया जाय जिससे इस व्यवस्था में आयी हुई कुछ कमियों को दूर किया जा सके तथा गाँधी जी की पंचायती राज व्यवस्था की आत्मा की शुद्धता व पवित्रता को संजाए रखा जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ–सूची

1. जोशी, डॉ0 आर0 पी0 तथा मंगलानी, डॉ0 रूपाः भारत में पंचायती राज, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2010, पृ0 84
2. पाण्डेय, गिरीश चन्द्र : लोकतन्त्र की नीव है पंचायती राज, 'कुरूक्षेत्र' वर्ष 84 (10) नई दिल्ली, 2008
3. सिंह, डॉ0 निशान्त : पंचायती राज व्यवस्था, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2007, पृ0 53
4. सन्तोषी, हरकिशन : दलितों के दलित, स्थिति, परिस्थिति और सम्भावनायें, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009, पृ0 42
5. कटारिया, डॉ0 सुरेन्द्र, पंचायती राज संस्थाएँ, अतीत वर्तमान और भविष्य, नेशनल पब्लि हाउस जयपुर, 2010,पृ0 3
6. सिंह, प्रोफेसर रणवीर, सांसद आदर्श ग्राम योजना, कुरूक्षेत्र वर्ष 61, अंक 01, नई दिल्ली, नवम्बर 2014, पृ0 22
7. मोदी, डॉ0 अनीता, ग्रामीण विकास और पंचायते–कुरूक्षेत्र, वर्ष 60, अंक–03, नई दिल्ली, जनवरी–2014, पृष्ठ 9
8. चौधरी, डॉ0 कृष्ण चन्द्र, ग्रामीण महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण, कुरूक्षेत्र, वर्ष 59, अंक 10, नई दिल्ली, अगस्त 2013, पृ0 8

Scanned with CamScanner